मासिक—

# मानव मन्दिर

सम्पादक :

डा० परस राम अग्रवाल


| वर्ष 9 | शनिवार 10 जुलाई 1982 | संख्या 3 |
|---|---|---|

# Board of trusteies of Faqir Library Charitable Trust (Regd.) Manavta Mandir
# H O S H I A R P U R.


1. Sh. K. M. Pardesi, President
2. Master Mohan Lal, Vice President
3. Sh. Subash Chander Kalia, General Secretary
4. Sh. Harbans Lal, Joint Secretary
5. His Holiness Anand Dayal Ji Maharaj
6. His Holiness Anand Rao ji Maharaj
7. Sh. S. N. Bhardwaj, Retd. Principal
8. Dr. K. L. Jaura, Retd Univ. Professor
9. Sardar Lal Singh
10. Dr. Darshan Singh
11. Sh. Puran Chand.
12. Pt. Narain Dass Dogra
13. Sh. Ram Rakha Chouda
14. Dr. Ram Dev Rao, U. S. A.
15. Sh. Vishwa Mitter, Maraj. W. Indies
16. Sh. Nand Singh Sihra, Canada

Executive Secretary cum Cashier

Dr. Paras Ram Aggarwal

# सत्संग परम सन्त परम दयाल फ़कीर चन्द जी महाराज दाता दयाल की समाधि पर

## राधास्वामी धाम ।

दिनांक 11-3-1975

दाता दयाल महर्षि जी ने क्या कुछ किया, है कहीं नाम निशान उन का, उनकी तालीम ही है ! यदि कोई इन्सान इसी से सबक ले ले कि जो कोई भी यहां आये उन सब ने चले जाना है, तुम्हारा हमारा, सब का अंजाम यही है, किसी का निशान रह गया, किसी का निशान न रहा । सोचता हूँ फिर करना क्या चाहिए ?

हम क्या करते हैं दुनिया में ? देखो न, कितनी हम मैं-मैं करते हैं, मेरा बाप, मेरी जायदाद, मेरा यह, मेरा वह, अंजाम क्या है ? यह जो तुम देख रहे

हो ! वह क्या है ? दाता दयाल का एक शब्द सुनाता हूं :—

सब हैं जाने वाले जग में, रहने वाला कोई नहीं ॥
रामचन्द्र अवधेश भुवाला, दीनानाथ दीन प्रतिपाला,
गये त्यागकर धर्म रटाला, रमने वाला कोई नहीं।
रावण गया बुद्धि बल शीला, साहस उद्यम में फुरतीला,
छैल छबीला रंग रंगीला, थमने वाला कोई नहीं।
सोलह कला कृष्ण औतारा, जिनकी गति का वार न पारा,
गये सहित कुल और परिवारा, रुकने वाला कोई नहीं।
परसराम क्रोधी अभिमानी, तेजस्वी बल बुद्धि की खानी,
ऐसे गये न नाम निशानी, टिकने वाला कोई नहीं।
मच्छ कच्छ बाराह पसारा, मिट गये जाने सब संसारा,
गये छोड़ माया विस्तारा, बसने वाला कोई नहीं।
बावन बलि सहस्रबाहू, नर भूषण नरेश नर नाहू,
सह-सह गये ताप त्रय दाहू, बचने वाला कोई नहीं।
विश्वामित्र अगस्त वशिष्टा, गौतम न्याय सृष्टि का स्रष्टा,
कपिल तत्त्व के दृष्टि का द्रष्टा, गुनने वाला कोई नहीं।
दुरयोधन दिल्ली का राजा, जिसने भारत दल को साजा,
चला त्यागकर सकल समाजा, सुनने वाला कोई नहीं।
राधास्वामी सन्त शिरोमणि आये, दे चितावनी जीव चिताये,
सुरत शब्द मत पन्थ चलाये, चलने वाला कोई नहीं।

अब तुम सोचो ! पहला प्रश्न तो यह है कि हम सुरत शब्द योग क्यों करें ? इस से हमें फ़ायदा क्या ? तुम सोचो मेरी बात को ! अन्धाधुन्ध जो कोई भी काम करता है उससे लाभ कुछ भी नहीं । लिखा हुआ है न कि आदमी आते हैं, चले जाते हैं, फिर दाता दयाल फरमाते हैं :—

राधास्वामी सन्त शिरोमणि आये दे चितावनी जीव चिताये,
सुरत शब्द मत पन्थ चलाये, चलने वाला कोई नहीं ।

दूसरा प्रश्न यह है कि हम सुरत शब्द योग पर कैसे चलें ? तुम पन्थाई हो, नाम लिया हुआ है दुनिया ने, किसी ने कहीं से, किसी ने कहीं से, कितने ही आदमी सुरत शब्द योग के अनुयायी हैं । मैं भी सुरत शब्द योग की शिक्षा देता हूँ । क्यों देता हूँ । मेरी क्या ग़रज़ है ? यह एक प्रश्न है जो मैं अपनी आत्मा से करता हूँ तुम लोगों से नहीं ।

इस दुनिया की उत्पत्ति और रचना, शास्त्रों तथा विज्ञान के अनुसार प्रकाश और शब्द से होती है । यदि सूरज न हो तो यहाँ कोई भी वस्तु पैदा नहीं हो सकती ।

सूरज प्राण है, हमारी ज़िन्दगी का दाता है। ज़िन्दगी और है हस्ती और है। ज़िन्दगी और हस्ती में अन्तर है। सूरज ज़िन्दगी देता है तथा जहाँ से हस्ती बनती है, उसका नाम है सत्त या सत्तलोक। तो सुरत शब्द योग क्यों चलाया गया ? क्योंकि जब तक कोई व्यक्ति अपनी तवज्जह को जो आदि अवस्था या आदि वस्तु जिसमें से कि यह सृष्टि बनती है, उसको नहीं पकड़ेगा वह इस चक्कर से नहीं निकल सकता। तुम होम्योपैथिक इलाज को देखो, जिस वस्तु से जो बीमारी पैदा होती है यदि वही वस्तु उस बीमार को दे दो, उसी वस्तु का वह प्रयोग करे तो उसकी वह बीमारी दूर हो जाती है। इस सृष्टि की रचना, प्रकाश और शब्द से होती है। अगर कोई व्यक्ति इस रचना से अर्थात् जो कुछ दुःख, सुख, Creation यहाँ हो रहा है, इससे बचना चाहता है तो उसी नियम के अनुसार जब तक कोई अपने अन्तर प्रकाश और शब्द को नहीं पकड़ेगा वह इस चक्कर से निकल नहीं सकता। यह Sceintific way है।

हम दुनिया में आये व फँसे हुए हैं, हमारे अन्तर जो असली चीज़ है यदि वह इस रचना या Creation (आवागमन) के परिणाम से बचना चाहती है तो वह क्या करे ? वह उसी चीज़ को पकड़े जिस चीज़ से यह दुनिया बनी हुई है। दुनिया किस चीज़ से बनी हुई है ? प्रकाश से और शब्द से। शास्त्र भी यही कहते हैं कि पृथ्वी से पानी, पानी से हवा, हवा से आग, आग से आकाश और आकाश का गुण है शब्द। ठीक है कि नहीं ? अब दाता फरमाते हैं कि उन्होंने सुरत शब्द योग को चलाया परन्तु शब्दयोग पर चलने वाला कोई नहीं। हम सत्संगी क्या करते हैं ? सारा जीवन कोई महर्षि जी के साथ जकड़ा हुआ है, कोई बाबे फ़कीर के साथ तो कोई किसी गुरु के साथ जकड़ा हुआ है। जिस गुरु के साथ तुम जकड़े हुए हो उस गुरु को यदि शरीर मानते हो तो यह पृथ्वी तत्त्व है। जब तक कोई व्यक्ति किसी इष्ट को शरीर रूप मानता रहेगा उसका तो बाप भी इस चक्कर से नहीं निकल सकता। सोचो मेरी बात को। तुम्हारा क्या नाम है ? शब्दानन्द। यह शब्दानन्द है, यह प्रेमानन्द है, सारी आयु तुम दाता दयाल के शिष्यों में रहे, तुम्हारी माता

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

भी रही, सारी आयु तुमने महर्षि जी के शरीर को जफ्फा मारा तथा महर्षि जी के शरीर को पूजते हुए मर के जाओगे, महर्षि जी लेने आयेंगे तो तुम्हारा आवागमन नहीं छूटेगा। यदि यह सोचते हो कि अन्त समय में तुम्हें महर्षि जी, हजूर महाराज या राधास्वामी दयाल लेने आयेंगे तो तुम्हारा आवागमन समाप्त हो जायेगा, तो तुम ग़लती पर हो। इसीलिए दाता दयाल जी महाराज ने लिखा है :—

राधास्वामी सन्त शिरोमणि आये, दे चितावनी जीव चिताये,
सुरत शब्द मत पन्थ चलाये, चलने वाला कोई नहीं ।

तुम तो सारा जीवन गुरु के शरीर को पूजते-पूजते मर गये ! तुम पार कैसे जाओगे ? मधुकर है यहाँ ? कान खोल के सुन ! तो जो भी व्यक्ति सारा जीवन किसी गुरु से नाम लेकर उस गुरु की दाढ़ी मूंछ और उस गुरु का डेरा, उस गुरु का शरीर और उस गुरु की समाध को ही पूजता रहेगा उसका आवागमन समाप्त नहीं हो सकता ! नहीं हो सकता !! नहीं हो सकता !!! यह मैं सन्त सत्तगुरु की हैसियत से आवाज़ दिये जाता हूं और

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

यही आवाज़ हज़ूर महा
जो मेरे दाता दयाल के गुरु
वाणी' में लिख गये हैं कि अन्त स
है, जिससे तुमने नाम लिया हुआ है व
जाता है और शब्द भी सुना देता है तो भ
का सूक्ष्म शरीर कुछ समय आसमान के ऊपर र
वहाँ गुरु के दर्शन भी होते रहेंगे, सत्संग भी उसको
मिलता रहेगा तथा जब फिर कोई सन्त सत्त-गुरु वक्त दुनिया में आयेगा, उसको फिर चोला मिलेगा तो वो उसके सम्पर्क में आकर शेष की कमाई पूरी करेगा। मैं उन शख़्सों के लिए संसार में अवतार लेकर आया हूं जो सचमुच अपने घर जाना चाहते हैं (उनके लिए नहीं जो समाधें, मानवता मन्दिर या डेरे बनाना चाहते हैं)।

कोई अभ्यासी यदि यह चाहें कि मैं किसी गुरु से नाम ले लूं और वह सारा जीवन उस गुरु के सुन्दर मुखड़े को ही चूमता रहें, दर्शन व प्रेम करता रहें और रोटियां खिलाता रहे या भाग्य-वती की तरह लातें दबाता रहे तो उसका आवागमन समाप्त हो जायेगा, मेरे निजी अनुभव के अनुसार और

महाराज राय सालिग राम साहिब के अनुभव के सार यह असम्भव है। यह तो हो गया शरीर का हाल।

अब जो व्यक्ति केवल गुरु की वाणी को ही याद करता रहता है, सुरत शब्द योग की पुस्तकें जो भिन्न-भिन्न सन्तों ने लिखीं हुई हैं चाहें किसी ने भी लिखीं, जो व्यक्ति केवल उन किताबों को ही पढ़ता रहेगा प्रातः उठकर सुखमणि साहिब का पाठ करता रहेगा, तथा सायं को अरदास करता रहेगा या वेदों के मन्त्र पढ़ता रहेगा वह भी इस चक्कर से नहीं निकल सकता क्योंकि उस ने आवाज़ अर्थात् बाणी को मुख्य समझा, इस लिए वह भी आवागमन से पार नहीं हो सकता। मेरी पिछली आयु है खबर नहीं अगले वर्ष आऊँ या न आऊँ। यदि कोई व्यक्ति पार जाना चाहता है तो उसको क्या करना चाहिए ? अब तुम कहोगे कि अनहद शब्द सुनो। मैं कहता हूँ अनहद जो अन्तर की आवाज़ है, धुन है जो व्यक्ति यदि केवल इसको ही सुनता रहेगा और उसको सुरत शब्द के वास्तविक अर्थ का नहीं पता, कुबेर नाथ है यहाँ ? सुन रहे हो मेरी बात, वो भी आवागमन से मुक्त

नहीं हो सकता क्योंकि शब्द व प्रकाश का काम है रचना करना। जो प्रकाश में जायेगा, रचना होगी, प्रकाश रचना करता है। अब तुम पूछोगें कि जो बात किसी ने नहीं कही आप वो कहते हैं। मैं नहीं कहता आप के राधास्वामी दयाल कह गये :—

विन सत्संग जो शब्द में पचते वह भी मूरख जान।

यह राधास्वामी दयाल की 'सार वचन' की वाणी है या कि नहीं ! जो किसी पूरे गुरु का सत्संग नहीं करते और शब्द का अभ्यास ही करते रहते हैं वे भी मूर्ख हैं। मैं चाहता हूँ कि मेरा यह भाषण छपे और ये जितने गुरु लोग हमें पार लगाने के लिए ठेकेदार बन कर आये हैं इनकी आँखें खुलें कि ये दुनिया को किधर ले जा रहे हैं परन्तु उनका भी कोई क़सूर नहीं, दुनिया सच्चाई की तरफ जाने को तैयार नहीं है। मेरे पास कितने ही व्यक्ति आते हैं कोई कहता है मैं बीमार हूँ, कोई कहता हैं मेरे पुत्र नहीं है इत्यादि, ये तो सांसारिक झगड़े हैं। क्योंकि मेरे ज़िम्मे Duty है, मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ अच्छा भई ! तुमने यह कह तो दिया, तू बता कि तू कैसे पार हो सकता है ? मैं पार हुआ या पार जाऊँगा वास्तव में दया तो

दाता दयाल की है। ऐसा हुआ ऐ सत्संगियो तुम्हारे चरणों की कृपा से मन का रूप समझ में आने और मन से परे निकल जाने से। क्यों ? मुझे भेद का पता नहीं लगता था, मैं तो उनको ही जफ्फी मारे बैठा था। अब मैं तुम को उन के शब्द सुनाता हूं कि जब मैं गुरु को इतना प्यार करता था तो वो मुझे क्या कहते हैं, मैं सत्संग दिये जा रहा हूँ, कभी सौ वर्ष पश्चात् कोई और सन्त आयेगा वह ऐसे सत्संग देगा :—

गुरू तो तेरे पास फ़कीरा गुरु तो तेरे पास।
त्याग भरम विचार मन का छोड़ जग की आस।।
आस कर गुरु चरन की, सब से होय निरास।।

देखो ! उन्होंने कहीं मुझे धोखा दिया है ? कितनो सच्चाई से कहा है। मैं मूर्ख था ! मैं अज्ञानी, बेबकूफ और नादान था !! मैं चंचल था, मैं कामी था, मैं विषयी था !!! इस लिए बात मेरी समझ में नहीं आतो थी। ये जितने व्यक्ति, जिनकी समझ में नहीं आता है इन में सबसे बड़ा रोग यह है कि ये कामी हैं। विशेष रूप से यह उनसे मैं कह रहा हूँ जो मुझे लेने के लिए आये हुए हैं, यमराज है मेरा वही !

आप लोग यमराज हैं मेरे, यह लिये जाते हैं, कोई कहता है खानपुर चलो, कोई कहता है कहीं चलो, कोई कहता है बनारस चलो, ये यमराज हैं मेरे वास्ते :—

तेरे मन में तेरे तन में, तेरे स्वासों स्वास,
गुरु बसे दिन रात प्यारे, धर चरन विश्वास।
गुरु नहिं तीरथ बरत में, गुरु न योग अभ्यास,
ढूढ़ अपने हृदय में नित, वहाँ उनका बास।
कर्म में माया है व्यापी, धर्म यम को फांस,
वन में अनबन देखी मन में, भ्रम था संन्यास।
तेरी चिन्ता गुरु को होगी, क्यों है तुझको त्रास,
राधास्वामी चरण गह, अज्ञान का कर नास।

अब तुम देखो कि दाता दयाल क्या कहते हैं, जो मैं कह रहा हूं वही दाता दयाल कहते है कि योग अभ्यास में भी नहीं है। तो जो सुरत शब्द योग हैं, क्या यह योग अभ्यास नहीं है ? मैं जानता हूँ मैं कहाँ बोल रहा हूँ, मैं पाँचवें पद में बोल रहा हूं। चौथा पद छोड़ गया पाँचवें पद में बोल रहा हूँ। यह दाता का ही तो शब्द है, मैं जो कहता हूँ। बिना सत्संग के जो शब्द को ही सुनते रहते हैं वे भी इस चक्कर से नहीं बच सकते, यह

और बात हैं कि इस लोक में ना ठहरे किसी और लोक में ठहरे, महर्लोक में ठहरे, जन:लोक में ठहरे, सत्तलोक में ठहरे, या नहीं ठहरे, ठहरे कहीं ठहरे ! मैंने जो यह कहा था उसके प्रमाण में मैंने आपको दाता दयाल की वाणी सुना दी ताकि कोई व्यक्ति, दाता दयाल के शिष्य मुझे यह नहीं कह सकते कि मैं ग़लती पर हूँ। यदि मैं ग़लती पर हूँ तो उनका गुरु जिसने यह वाणी लिखी है वो भी ग़लती पर है :-

गुरु नहिं तीरथ बरत में, गुरु न योग अभ्यास,
ढूंढ़ अपने हृदय में नित, वहां उनका बास।

मैंने सारे जीवन गुरु को ढूंढ़ा है। अब तुम देखो ! यदि शब्द व प्रकाश ही गुरु होता तो चौबीस घण्टे मेरे साथ रहता ? मेरे पास चौबीस घण्टे वह कौन सी चीज़ रहती है ? वह वो वस्तु है जो तुम्हारे शरीर में रहती हुई प्रकाश को देखती है और शब्द को सुनती है, मन के ख्यालात की साक्षी है और शरीर के बोधभानों को अनुभव करती है, वो चीज़ है सच्चा सत्तगुरु। वह तुम हो, आप बजात-ए-खुद तुम्हारी ज़ात है, तुम नहीं हो। तुम तो अपने आप को

शरीर भी मान लेते हो, मन भी मान लेते हो, गुरु भी मान लेते हो, शिष्य भी मान लेते हो, वह जो असली चीज़ है वो है ज़ात । मुझको उस ज़ात का पता नहीं लगता था कि वो ज़ात क्या है ? ऐ सत्संगियो ! दाता दयाल ! तेरा एहसान है । मैं सच्चाई का इच्छुक था, उनको तंग किया करता था, उन्होंने सन् 1933 में मुझे एक खेल खिलाया । एक शब्द में वो लिखते हैं :—

खेल खिलहाऊँ सुगम सुहेला, सुरत शब्द गाऊँ,
काल जाल से अब तू बांचे, विधि विचित्र बताऊँ ।

क्या ? :—

कर सत्संग बिवेक से गुरु का, गुरु दीन दयाल हितकारी,
साधु बन के साथ ले विरति, जा झूले से पारी ।

अब मैंने आपको विवेक ही दिया न ! दाता तो कहते हैं कि योग अभ्यास भी गुरु नहीं है । तो फिर गुरु कौन हुआ ? गुरु है अनुभव । जो चीज़ तुम्हारे अन्तर में है जब वो अभ्यास करती हुई शरीर को छोड़ जाती है और मन के ख्यालात को छोड़ जाती है, प्रकाश को देखती हुई प्रकाश को भूल जाती है, शब्द को सुनती हुई शब्द को भूल जाती है वो जा

चीज़ शेष रह जाती है वो गुरु है और वो तुम हो, तुम्हारी ज़ात है। जब यह अनुभव हो जाता है फिर उसे अभ्यास करने की कोई आवश्यकता नहीं।

यदि शब्द ही गुरु होता, (दूसरा प्रमाण देता हूं) तो कबीर कभी न कहता :—

जप मरे अजपा मरे अनहद भी मर जाये,
सुरत समानी शब्द में ताको काल न खाये।

तो असली चीज़ क्या हुई ? वो चीज़ जो तुम्हारे अन्तर में रहती हुई शब्द को सुनती है, प्रकाश को देखती है और तुम्हारे शारीरिक बोधभानों को अनुभव करती है, वो है ज़ात, वो है सुरत और वो तुम से अलग नहीं, हर समय तुम्हारे पास है, तुम अपनी ज़ात से कभी ग़ाफ़िल (अचेत) हुए नहीं !, केवल भ्रम है। तुम समझते हो कि गुरु होशियारपुर में रहता है, तुम समझते हो गुरु प्रकाश स्वरूप है, तुम समझते हो गुरु शब्द स्वरूप है। होशियारपुर के गुरु से तुमको केवल असली और सच्चे सतगुरु का पता मिलेगा जैसे दाता मुझे दे रहे हैं परन्तु मेरी समझ में नहीं आता था। मुझ से यह जो खेल खिलाया यह अपनी असलियत को जानने के

लिए खिलाया ;—

कर्म में माया है व्यापी, धर्म यम की फाँस,
बन में अनवन देखी मन में, भ्रम था संन्यास।

कर्म में माया है। तुम कान बन्द करके बैठते हो, समाधि लगाते हो, क्या कान, मुख बन्द करके समाधि लगाना कर्म नहीं है, बताओ ? तुम मेरे पास आते हो, आरती करते हो, क्या यह कर्म नहीं है ? तुम मुझे देख के माथा टेकते हो और अपने मन से मुझे बना लेते हो। क्या यह कर्म नहीं है ? यह कर्म है क्या ? माया। माया क्या है ? माया है हमारी बुद्धि। हम जो कुछ करते हैं बुद्धि से ही करते हैं न ! दाता ! तेरी शिक्षा को समझा किसी ने नहीं, कौन समझने वाला है ? देखो, क्या लिखते हैं कि कर्म में माया है व्यापी। किसी ने सोचा कि कर्म क्या है ? मैं धाम में आया यह मेरा कर्म है, यहां पैसा चढ़ाया यह मेरा कर्म है, यहां सत्संग कराया, बात कर रहा हूं यह मेरा कर्म है :—

तेरी चिन्ता गुरु को होगी, क्यों है तुझको त्रास,
राधास्वामी चरण गह, अज्ञान का कर नास।

अब देखो ! मैं तो उनको गुरु मानता था और वो मुझे क्या कह रहे हैं परन्तु यह बात मेरी खोपड़ी में नहीं आती थी। यह तो नहीं कहा उन्होंने कि मैं तेरा गुरु हूं। कौन से गुरु को चिन्ता थी ? तुम्हारी चिन्ता तुम्हारे अपने आप को होती है, जैसी तुम्हारी इच्छा होती है वही कुछ तुम्हारे साथ होता रहता है। Thou are the maker of your ownself :—

राधास्वामी चरण गह, अज्ञान का कर नास।

यह राधास्वामी के चरण क्या हैं ? राधास्वामी के चरण हैं प्रकाश। जब तक कोई व्यक्ति पहले प्रकाशमय नहीं होता ब्रह्ममय नहीं होगा, उसके जो मन के ख़्यालात व विचार हैं, मन, बुद्धि, चित्त, अंहकार जितने Function करते हैं ये ख़त्म नहीं होते। दाता ने ये किताबें लिखीं माया देश में बैठकर लिखीं। मैं जितना काम करता हूं या किताबें लिखीं मायादेश में बैठकर ही लिखी हैं न, यदि यह न हो तो मैं लिख नहीं सकता, न मैं बोल सकता हूं, न मैं हिल सकता हू। दाता दयाल ने मुझे यह समझाया। मैं आपको यह प्रमाण देना चाहता हूं कि जो कुछ मैंने अपने

जीवन में कहा यही दाता दयाल कह गये परन्तु जब मेरी समझ में नहीं आया तो तुम्हारी समझ में कैसे आता। तुमको समझाने के लिए यह ठेका लेकर मैं आया हूं। क्यों? मेरे ज़िम्मे duty है :—

तू तो आया नर देही में धर फ़कीर का भेखा,
दु:खी जीव को अंग लगाकर ले जा गुरु के देसा।

गुरु का देश कौन सा है? वह अवस्था जो शब्द और प्रकाश से परे है। उस अवस्था को सिक्खों में बोलते हैं 'अकाल पुरुष' और सन्तों में 'अनामी पुरुष'। वाणी पढ़ो :-

सुरत हुई अतिकर मगनानी,
पुरुष अनामी जाय समानी।

वो अनामी पुरुष कौन है? वह अनामी पुरुष तुम्हारी ज़ात है। यह कब मिलेगा? जब सत्संग करोगे। सत्संग की बात तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी जब तक कि तुम गुरु के चरण नहीं पकड़ोगे। गुरु के चरण क्या हैं? प्रकाश और सत्तगुरु। जब तक किसी की सुरत एकाग्र हो के प्रकाशमय नहीं होती उसका जो मन है यह स्थिर नहीं हो सकता। चूंकि मन स्थिर नहीं हो सकता इस वास्ते

उसको सच्चा अनुभव नहीं हो सकता। बेशक मैं लाख सत्संग सुनाता रहूं, जो मरज़ी है बातें कहूं, जिनके मन स्थिर नहीं हैं वे मेरी इस बात को समझने के योग्य नहीं हैं, अक़ली तौर से, ख़्याली तौर से शायद समझ जाओ परन्तु उसका Practical way क्या है ? अपने अन्तर प्रकाश को प्रकट करना। एक दूसरे शब्द में मुझे कहते हैं :-

काहे बौराना हाय फ़किरवा

तेरे घट में माल खज़ाना, भया दिवाना हाय फ़किरवा।

मैंने कल के सत्संग में कहा था कि यदि तुम दुनिया चाहते हो तो भ्रूमध्य के ऊपर रूप बनाओ और जो चाहो सो लो। सहस्रदल कमल, त्रिकुटी, सुन्न, भँवरगुफा, सत्त, अलख और अगम ये दुकानें हैं, यहां सौदे बिकते हैं। यदि सांसारिक सफलता चाहते हो तो यहां गुरु स्वरूप का ध्यान करो; यदि मस्ती चाहते हो तो सुन्न में जाओ और यदि ज्ञान चाहते तो भँवरगुफा में जाओ। यदि हस्त होना चाहते हो, अपनी हस्ती में जाना चाहते हो तो सत्तलोक में जाओ और यदि अपनी हस्ती को मिटाकर वासल-ए-ज़ात (अपनी ज़ात से मिल

कर एक) होना चाहते हो तो आगे जाओ। यह सब तुम्हारे ही पास है, मेरे पास नहीं है :—

जाकी चाह में खोजत डोले, मन में समाना हाय फ़किरवा।

मैं ढूंढ़ता था किसी वस्तु को! कौन ऐसा मूर्ख है कि तीन-तीन महीने की छुट्टी लेकर आता तो यहां आ जाता या लाहौर जाता, बीवी छोड़ो क्योंकि मेरे मन में यह चाह थी, तुमको चाह है, दौलत की, पैसे को! मधुकर लिये जाता है आज, पूछो इससे क्या करेगा मुझे ले जा कर वहां! पैसा मैं भी चाहता हूं परन्तु अपनी ज़ाती ग़रज़ तो नहीं मन्दिर की ग़रज़ है। जितना सियाप्पा पिटटा, मन्दिर बनाया केवल इन विचारों को फैलाने के लिए क्योंकि सैण्टर के बिना मैं काम नहीं कर सकता था, इस लिए मेरे लिए मजबूरी थी :—

तीरथ व्रत सभी तेरे भीतर, नहिं कहीं जाना हाय फकिरवा।

जितने शब्द दाता दयाल के हैं, सब में राधा-स्वामी चरण शरण आई है न। किस राधास्वामी के चरणों पर अपने आप को अर्पित करो? तुम्हारे अन्तर प्रकाश हैं पारब्रह्म है वो है गुरु के चरण। भाग्यवती सुनती है :—

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

मेरे नाम तीसरा शब्द है :-

क्यों भरमा फकीर ! क्यों भरमा फकीर !
काहे दीवाना हो गया।

अब देखो ! मैं तो दाता दयाल से इतना प्रेम करता था, सेवा करता था, आरतियाँ करता था और वह क्या कहते हैं ? अरे तू भ्रम में क्यों आया हुआ है ? क्यों पागल हो गया ! मेरे जैसे व्यक्ति को ज्ञान देना, सिवाय महर्षि जी के और कोई हस्ती संसार में पैदा ही नहीं हुई। वो कहा करते थे कि 'तेरे जैसे दीवाने की ज़िन्दगी को सम्भालना, सिवाय मेरे और किसी का काम नहीं। देखो, क्या कहते हैं ? मैं तो प्रेम करता हूं, सेवा करता हूं, उनके गुण गाता हूं तो वह क्या कहते हैं :—

क्यों भरमा फ़कीर ! क्यों भरमा फ़कीर !
काहे दीवाना हो गया ।।
गुरु चरण गहा ! गुरु चरण गहा,
ले ठौर ठिकाना हो गया ।।
नहिं होय अकाज, नाहीं होय अकाज,
जमफन्द कटाना हो गया ।।

क्योंकि प्रकाश जो प्रकट हो गया तो यम के फन्द अपने आप ही कट गये। प्रकाश में तो तुम

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

तब ठहर सकोगे जब तुम्हारा मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार समाप्त हो जायेगा। इसके आगे प्रकाश में जाओगे, निचले जो प्रकाश हैं ये और हैं :—

क्यों विकल रहे, क्यों विकल रहे,
अब वो मस्ताना हो गया ।।

तन बिमल हुआ, तन बिमल हुआ,
गंगा स्नाना हो गया ।।

सतसंग में आ, सतसंग में आ,
जप, तप और ध्याना हो गया ।।

यह ! जब मैं वगदाद में था तो मैंने अभ्यास किया, 12-12 घण्टे मैंने अभ्यास किया है। प्रकाश और शब्द की वो हालत थी कि सब जगह जहां मैं दौरे पर जाता था वीणें बजती रहती थीं, उस समय वो मुझ को लिख रहें हैं। इसका क्या मतलब हुआ ? कि जो कुछ मैं करता था वो अधूरा था। वह कहते हैं सत्संग में आ। जो कुछ मैंने सत्संग में साफ ब्यानी की है यह पिछले सन्तों ने केवल सैन-बैन और संकेत किया है, जिसकी समझ में आ गया, आ गया। सैन-बैन को मैंने काट दिया, मैंने सैन-बैन नहीं की, मैंने डंडा हाथ में लिया कि

वैसे नहीं, ऐसे है। समय समय की बात है, किसी वक्त स्वामी जी के समय में स्वामी और शिष्य का सम्बन्ध था। हुजूर महाराज के समय में बाप और बेटे का, दाता दयाल के समय में भाई-भाई का सम्बन्ध था, मेरा सम्बन्ध यार-दोस्त का है। जिस तरह यार दोस्त होते हैं। भाई फिर भी भाई का अदब करता है न! यार-दोस्त लंगोटिये होते हैं, यार को गाली भी निकाल देते हैं। तुम्हारे जो लंगोटिये हैं, जिनके साथ तुम खेले हुए हो वो प्रोफ़ेसर तो नहीं कहेंगे, वो कहेंगे आ प्रेमानन्दिया! सुना तेरा क्या हाल है? वे तुम को इज्ज़त से नहीं बुलायेंगे, नहीं समझ में आया! उसके दिल में तो इज्ज़त होगा मगर लफ्ज़ उसके बड़े खराब होंगे, मैं वह हूं। मैं यार बनता हूं, दोस्त बनता हूं अच्छा-बुरा भी बोल देता हूं। अब भविष्य में जो चोला आयेगा वो राज्य अर्थात् हकूमत में आयेगा :—

क्या नेम धरम, क्या नेम धरम,
जब सत का ज्ञाना हो गया।
नित नित का कर्म, नित नित का कर्म,
राधास्वामी गुन गाना हो गया।

मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं फकीर चन्द ! तू बता कि तुझ को सत्त का ज्ञान हुआ ? दाता ने कहा था फकीर ! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा बदल जाना, उन्होंने मुझे यह नहीं कहा कि तूने क्या करना है। मैंने जो अनुभव किया मैं वो कहता हूं कि असलियत क्या है ? असलियत यह है कि एक स व है, जिसका कोई रूप नहीं कोई रंग नहीं परन्तु वह है। जब वह गति में आता है तो शब्द प्रकट होता हैं, तब हम उसका नाम धरते हैं :—

शब्द प्रकट तब धरिया नाम, शब्द गुप्त तब रहा अनाम।

वह जो पहली चीज है वो आद है। यह सृष्टि का नियम ऐसे ही चलता है कहीं सूर्य बनता है, कहीं चांद बनते हैं, कहीं लोक-लोकान्तर बनते हैं। तुम खुद देखो ! तुम्हारे शरीर में अनगिनत कीड़े हैं, थूक में कीड़े 'टट्टी' में कीड़े, खून में कीड़े, आप को पता है कितने कीड़े हैं, जानते हैं आप ? असंख्य हैं। तो यह संसार है। अब मुझे क्या मिल गया ? इस अनुभव में आकर एक विशेष प्रकार का सरूर (मस्ती) लेता हूं और यह चिन्ता नहीं कि संसार क्या है। अरे!

दुनिया बनाने वाला जाने, मैं कोई ठेकेदार थोड़े हूं। जो कुछ हो रहा है उसकी मौज में हो रहा है। राजी व रज़ा होकर अपना जीवन प्रसन्नता से काटता हूं इसका नाम है जीवन्मुक्त और विदेह गति, यही उद्देश्य (मन्ज़िल-ए-मक़सूद) है। उसका अन्त न दाता दयाल को मिला, न स्वामी जी को मिला, न कबीर साहिब और न ऋषियों को मिला। यदि किसी को मिला तो इतना ही मिला कि एक तत्त्व है उसमें गति होती है, उसी की रचना है, इसका नाम है सार अनुभव और सार ज्ञान। फिर ? जी चाहता है तो सुमिरन करूँ, ध्यान करूं, नहीं चाहता है तो न करूँ।

अब तुम कहोगे कि दाता ने क्या कहा ? दाता की वाणियें पढ़ो, ओए दाता के शिष्यो ! एक जगह लिखते हैं 'रात दिन काम करता हूं, फ़ुरसत मिलती है तो नाम जपता हूं या दिन को काम रात को आराम और वक्त मिले तो राधास्वामी नाम'। ये दाता के शब्द हैं या कि नहीं ? मेरे हों तो मुझे कान से पकड़ो, अब तुम मुझे कह नहीं सकते। मैं अनुभव के बाद वहाँ पहुंचा। मुझे अनुभव किसने

दिलाया ? ऐ सत्संगियो ! तुम्हारा भला हो। दया तो इस ज़ात पाक की है जिसने मुझे काम दिया, यदि यह काम न देते तो मुझे इस भेद का पता न लगता। दाता इशारा किया करते थे, संकेत मेरी समझ में नहीं आता था इस लिए मैंने साफ़ ब्यानी से काम लिया :—

नित नित का कर्म, नित नित का कर्म,
राधास्वामी गुन गाना हो गया।

मुझे इस से क्या सबक़ मिला ? स्वाभाविक जो मैं करता हूं वो होता रहता है। इस अवस्था में रहने वाले को ही कहते हैं सहज समाधि, इसी अवस्था का नाम है विदेह गति, विदेह गति में रहने वाला सहज समाधि में रहता है :—

साधो सहज समाधि भली।
गुरु प्रताप जा दिन से जागी, दिन दिन अधिक चली॥

यह सुरत शब्द योग यदि कोई पूरा गुरु नहीं मिला हुआ इन्सान को तो दीवाना व पागल बना देगा। अब गुरु प्रताप क्या हुआ ? तुम्हारे चरणों की कृपा

से और दाता दयाल की दया से जब से मेरी सुरत जागी, क्या जागी ? उसको यह समझ आई कि मैं कौन हूं । मैं न शरीर हूं, न मन हूं, न शब्द हूं, और न प्रकाश हूं । मैं वह चीज़ हूं जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है और शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है, वह है ज़ात । तुम्हारी दया से मुझे विश्वास होना चाहिए कि नहीं होना चाहिए ? यदि तुम सोचो तो तुमको भी विश्वास होना चाहिए कि तुम्हारा अन्त में यह रूप है । इसको कहते हैं गुरु प्रताप । मैं कहता हूं सत्संगियो ! तुम्हारे प्रताप से मेरी सुरत जागी, दया तो दाता दयाल की है ।

यह मैं क्यों कहता हूं ? दाता ने, जब मैं उनको तंग करता था तो सन् 1918 में मुझे कहा था फ़कीर ! तुमको काम देता हूं । तुम में 99 दोष हैं 99, एक सच्चाई है । मेरी आज्ञा मानो तुमको सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल के दर्शन सत्संगियों के रूप में होंगे । तो फिर सत्तपुरुष राधास्वामी दयाल ! क्या हुआ ? यह समझ, यह ज्ञान जो मुझ को

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

पैदा तो मेरे अन्तर हुआ है लेकिन उसके सहायक आप लोग साबित हुए। दया, दाता दयाल की :—

जहँ जहँ डोलौं सो परिकरमा, जो कुछ करौं सो सेवा,
जब सोवौं तब करौं दंडवत, पूजौं और न देवा।
कहौं सो नाम सुनौं सो सुमिरन, खांव पियौं सो पूजा,
गिरह उजाड़ एक सम लेखौं, भाव मिटावौं दूजा।
आँख न मूंदौं कान न रूंधौं, तनिक कष्ट नहिं धारौं,
खुले नैन पहिचानौं हँसि हँसि, सुन्दर रूप निहारौं।
सब्द निरन्तर से मन लागा, मलिन बासना त्यागी,
उठत बैठत कबहुं न छूटे, ऐसी तारी लागी।
कहैं कबीर यह उनमुनि रहनी, सो परगट कर गाई,
दुःख सुख से कोई परे परम पद, तेहि पद रहा समाई।

तो फिर अब क्या करना है ? :—

सब हैं जाने वाले जग में, रहने वाला कोई नहीं।

इस बात का विश्वास रखना कि हम मुसाफ़िर हैं यहां! कोई दस वर्ष जिया, कोई बीस वर्ष जिया तो कोई पचास वर्ष जिया, सबने चले जाना है। फिर जिस को यह यक़ीन होता है वह तलाश करता है कि मैं कहां से आया हूं। इस तलाश के सिलसिले में इसको demand जैसे मुझको हुई,

मैं कोई गुरु को ढूंढ़ने निकला था ? मैं तो गुरुमत को जानता ही नहीं था। मेरे अन्तर एक craving थी, उसकी तलाश में गया था मैं, दाता के चरणों में चला गया क्योंकि तलाश सच्ची थी मुझे वह चीज़ मिल गई। क्या मिला मुझे ?

राधास्वामी संत शिरोमणि आये, दे चितावनी जीव चिताये,
सुरत शब्द मत पन्थ चलाये, चलने वाला कोई नहीं।

अब जो उसका उद्देश्य है उस पर तो कोई चलता नहीं, कोई सुमिरन के साथ फंसा हुआ है, कोई गुरु के शरीर या डेरे के साथ फंसा हुआ है, कोई लफ़ज़ नाम के साथ फंसा हुआ है, कोई ध्यान के साथ फंसा हुआ है तो कोई कर्म के साथ फंसा हुआ है, जब यह Realization (अनुभव) हो जाता है फिर वह सब कुछ करता हुआ कुछ भी नहीं करता। उसका जीवन एक अजीब सा हो जाता है। तो मैं तो यह समझा।

अब प्रश्न यह है कि तूने तो ऊँची-ऊँची बात कह दी। बेचारे साधारण गृहस्थी जो हैं ये क्या करें ? इनको मैं यह कहता हूं कि दो

मार्ग हैं एक निवृत्ति, एक प्रवृत्ति। एक रूप बनाओ, एक नाम पकड़ लो। भ्रूमध्य और त्रिकुटी पर ठहरा करो तुम्हारी दुनिया बनती रहेगी। बस एक बात बता दी यदि किसी बीतराग पुरुष की खोपड़ी में रखो तो जिस प्रकार औरत को देखने से काम उत्पन्न होता है, साधु के देखने से भक्ति का ख्याल आता है, पानी के देखने से ठंडक आती है इसी तरह किसी सन्त के देखने से, जो बीतराग पुरुष सचमुच हो, उसके दर्शन करने से उसकी Rediation से तुम्हारे जीवन में परिवर्तन आना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति के अन्तर से Rediation निकलती है। Human body is a radio Station। उसका प्रमाण, आप प्रतिदिन देखते हैं कि Police के पास कुत्ते होते हैं जहां कोई क़त्ल करता है या खून होता है तो उस अपराधी का जूता या कपड़ा कोई भी चीज़ उस कुत्ते को सुंघा देते हैं, फिर उस कुत्ते को छोड़ देते हैं। जो खुशबू उसके कपड़े या जूते या किसी और वस्तु में आई थी उसी खुशबू को सूंघता हुआ चलता है और वह सुगन्ध जिस व्यक्ति से निकली होती है वह उसको जा पकड़ता

है। यह और बात है, कि कुत्ते में प्रकृति ने शक्ति दी है कि वह समझ जाये। हम लोग नहीं समझ सकते परन्तु इससे यह तो प्रमाणित हुआ कि प्रत्येक व्यक्ति के अन्तर से सुगन्ध निकलती है। इस लिए मैंने शिक्षा को बदला है। क्या कहता हूं ? ऐ इन्सान ! तू अपने घरों में रहता है तो प्रेम और मुहब्बत से रह। भाई-भाई की दुश्मनी है, पति-पत्नी की नहीं बनती, तुम्हारा प्रेम भाव नहीं है तुम्हारे दिल के अन्तर से जो द्वेष और घृणा निकलती रहती है, जहां 2 जिस-2 मकान में रहोगे, जहाँ-जहां जाओगे, वहां-वहां वो फैलेगी और जो अधिकारी होंगे उन पर प्रभाव डालेगी। मुझ से भी अभी तक सन्त पूरा नहीं बना गया, I fall, मैं गिर जाता हूं। हर समय अपने आपको Balance State (समता) में रखना और दिल में किसी से नफरत, द्वेष कुछ न पैदा होना यह है अवस्था सन्त की, परन्तु मैं तो गिर जाता हूं। कोशिश करता रहता हूं। दाता ! मेरी आँखों के सामने 1905 का लाहौर का वह बचपन का जमाना याद आता है जब पहली बार दाता के चरणों में गया था, वो सुन्दर मूर्ति मेरे सामने आती

है । उस ज़ात पाक ने मुझ पापी को, मुझ पतित को छाती से लगाया, प्रेम किया । मेरे अन्तर एक तलाश थी उस कुरीद को मिटाने के लिए मुझे यह गुरुआई दी थी । मैं मित्रो ! न गुरु हूं न महात्मा हूं, न गुरु बनने की हवस है, न मत्थे हिलाने की हवस है । यह ठीक है कि मैं चाहता हूं, जब तक जीवित हूं रोटी मिलती रहे खाने को, स्वास्थ्य ठीक रहे, इस ग़रज़ से तो मैं मुक्त नहीं हूं परन्तु लालच नहीं है । तो मैं यहाँ आ जाता हूं, आप लोग भी आ जाते हैं दाता ने कहा था फ़कीर ! चोला छोड़ने से पहले शिक्षा बदल जाना, मैंने बदल दिया । बहुत कुछ कह दिया, अब आरती कर दो :—

तेरी दया का दृढ़ विश्वास हुआ,
चरनों में पड़ा निज दास हुआ ।
करूं बीनती दोऊ कर जोरी,
अरज सुनो राधास्वामी मोरी,
संसार से सहज उदास हुआ ।
सत्तपुरुष तुम सत्तगुरु दाता,
सब जीवन के पितु और माता,
ढारस बांधी घट में उजास हुआ ।
दया धार अपना कर लीजे,

काल जाल से न्यारा कीजे,
तब समझूंगा, माया का नास हुआ।
सतयुग त्रेता द्वापर बीता,
काहु न जानी शब्द की रीता,
सब में अज्ञान का बास हुआ।
कलयुग में स्वामी दया बिचारी,
परगट करके शब्द पुकारी,
विद्या सत ज्ञान का भास हुआ।
जीव काज स्वामी जग में आये,
भव सागर से पार लगाये,
तब दुःखी जीव सुख रास हुआ।
तीन छोड़ चौथा पद दीना,
सत्तनाम सतगुरु गति चीन्हा,
अनुभव का आप विकास हुआ।
जगमग जोत होत अजियारा,
गगन सोत पर चन्द्र निहारा,
घट ब्रह्मरेन्द्र कैलाश हुआ।
स्वेत सिंघासन छत्र विराजे,
अनहद शब्द गैब धुन गाजे,
हिया उमगा हर्ष हुलास हुआ।
क्षर अक्षर निह अक्षर पारा,
विनती करे जहाँ दास तुम्हारा,
पृथ्वी छुटी गुजर आकास हुआ।
लोक अलोक पाऊँ सुख धामा,
चरन शरन दीजे विस्रामा,
राधास्वामी चरन निवास हुआ।

# सतसंग परम सन्त मानव दयाल जी महाराज, मानवता मन्दिर

होशियारपुर

दिनांक 16-5-82

जेठ महोना जेठा भारी,
जीवन हिरदे तपन करारी।
संत दयाल जीव हितकारी,
भेद कहें अब निज कर भारी।
नहिं ख़ालिक़ मख़लूक़ न ख़िल्क़त,
कर्ता कारन काज न दिक्क़त।
द्रष्टा दृष्टि नहिं कुछ दरसत,
बाच लक्ष नहिं पद न पदारथ।
ज़ात सिफ़ात न अव्वल आख़िर,
गुप्त न परघट बातिन ज़ाहिर।
राम रहीम करीम न केशो,
कुछ नहिं कुछ नहिं कुछ नहिं था सो।

सिम्रित शास्त्र न गीता भागवत,
कथा पुरान न वक्ता कीरत ।
सेवक सेव न दास न स्वामी,
नहिं सतनाम न नाम अनामी ।
कहाँ लग कहूँ नहीं था कोई,
चार लोक रचना नहिं होई ।
जो कुछ था सो अब कह भाखूं,
उनमुन सुन, विसमाधी राखूं ।

—: :—

हमें भी दे तार लाखों तारे,
दयाल दाता कृपाल स्वामी ।
लगादे भव जल के अब किनारे,
दयाल दाता कृपाल स्वामी ।।
न हो किसी से हमारा नाता,
न हम किसी का सहारा ढूंढ़ें ।
रहें सदा तेरे ही सहारे,
दयाल दाता कृपाल स्वामी ।।
न मोह माया का मन में खटका,
न काल और कर्म का हो झटका ।

निवास कर मन में अब हमारे,
दयाल दाता कृपाल स्वामी ॥
दे प्रेम भक्ति का दान हमको,
न दे तू सन्मान मान हमको ।
यही है विनती हमारी निसदिन,
दयाल दाता कृपाल स्वामी ॥
दे खोल दृष्टि तुझे पिछानें,
दरस परस करके तुझको मानें ।
उदय हों घट सूर चन्द्र तारे,
दयाल दाता कृपाल स्वामी ॥
अलख अगम का दिखा तमाशा,
दिलादे निज धाम में तू बासा ।
चरन कमल के रहें सहारे,
दयाल दाता कृपाल स्वामी ॥
जपूं सदा मन से राधास्वामी,
कहूं सदा मुख से राधास्वामी ।
दिला दिला नाम धन दुलारे,
दयाल दाता कृपाल स्वामी ॥

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL



इस वाणी को जेठ महीने की महिमा से आरम्भ किया गया है और फिर परमतत्त्व की व्याख्या की गई है। सबसे पहले मैं आपको जेठ महीने की शुभ कामनाएँ देता हूं फिर वन्दना करके सत्संग शुरू करूंगा।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु; गुरुर्देवो महेश्वर; ।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
मस्तरामसुतं देवं फकीरचन्दपण्डितम् ।
परमं सन्तं दयालं व तस्मै वन्दे जगद्गुरुम् ॥

गुरु सृजन शक्ति अर्थात् ब्रह्मा का स्वरूप हैं। गुरु पालन करने वाली शक्ति विष्णु का स्वरूप हैं, गुरु अज्ञान को नाश करने वाली शक्ति शिव का स्वरुप भी हैं तथा गुरु इन तीनों से परे उस परब्रह्म तत्त्व का स्वरूप साक्षात् शरीर में हैं। इस लिए मैंने यह नमस्कार का श्लोक पढ़ा। मस्तरामसुतं देवं अर्थात् मस्तराम जी के घर में शरीर रूप से उत्पन्न हुए पण्डित फकीरचन्द जी महाराज जो परमसन्त हैं, परमदयाल हैं और जगत् के गुरु हैं उनको नमस्कार है।

जब किसी बालक को शिक्षा देते हैं तो अक्षर सिखाते हैं। अक्षर क्या होता है ? जिसका क्षय नहीं होता, अक्षर ब्रह्म भी है। अक्षर सिखाते हैं तो कैसे सिखाते हैं ? अक्षर देखा नहीं जाता. अक्षर 'अ' भी होता है तो 'अ' से अनार, 'क' से कबूतर सिखाते हैं तब जाकर उसको ज्ञान होना है। इस लिए जब मैं महाराज जी के प्रति नमस्कार करता हूँ और कहता हूँ मस्तरामसुतं देवं (उनको साक्षात् भी आपने देखा है) तो यह नमस्कार करते समय मस्तराम जी के पुत्र शरीर रूप में कहने का मतलब यह नहीं कि वह यहां तक ही सीमित हैं, यह उनका सगुण रूप है इस लिए यह नमस्कार जो है सन्तमत के अनुसार है। और फिर देखिये यथा नाम तथा गुण, उनके पिता का नाम मस्तराम अर्थात् मालिक की मस्ती में रहने वाले और फिर उनका अपना नाम फ़कीरचन्द, नाम भी गुण के समान है और फ़कीर का मतलब होता है परमतत्त्व। देवं इस लिए कहा गया है कि उनमें दैवी गुण हैं। गुण दो प्रकार के होते हैं. दैवी और आसुरी।

मनुष्य में दैवी और आसुरी दो प्रवृत्तियाँ होती हैं। दैवी प्रवृत्ति वह प्रवृति होती है जिसको सन्तों के गुण कहते हैं। सन्तों के गुण क्या होते हैं? सबसे प्रेम करना, सब पर दया करना, सब लोगों की भलाई करना यह दैवी सम्पत्ति कहलाती है और आसुरी सम्पत्ति होती है सबको दुःख देना, सब से नफ़रत करना और सब का नुक़सान करना। देवं क्यों कहा? क्या महाराज जी में आसुरी गुण थे? नहीं! उनके गुण भी दैवी थे इस लिए मस्तरामसुतं देव कहा है। मैं आज मस्तरामसुतं देवं की व्याख्या कर रहा हूँ क्योंकि नारायणदास जी ने एक दिन ऐसा करने को कहा था ताकि लोगों को भ्रान्ति न हो।

फकीरचन्दपण्डितम्—फ़कीरचन्द उनका नाम। पण्डित कौन होता है? जो परम ज्ञानी होता है उसको पण्डित कहते हैं। तो क्या उन में पण्डिताई की कमी थी? यह नहीं कि ब्राह्मण के घर पैदा हुए इस लिए हम उन्हें पण्डित कहते हैं, पण्डित का अर्थ वह मनुष्य है जिसको पूरा ज्ञान हो चुका है।

और डाक्टर की उपाधि जो मेरे साथ लगाई गई है यह यूनिवर्सिटी से मिली है, डाक्टर का अर्थ भी पण्डित होता है। परमं सन्तं—सन्तों में परम, सबसे ऊँचे परमतत्त्व वाले सन्त। बाकी सन्त तो बहुत हैं लेकिन वे परमसन्त नहीं हैं। दयालं—जो परमदयाल हैं तथा जगत् के गुरु हैं। जगत् के गुरु शरीर रूप में भी थे और इस समय अपने स्थान पर जाकर अपने उच्चतम सिंहासन पर मूलतत्त्व में मिलकर इस समय भी वह हैं इस लिए मैंने नमस्कार किया है। उनकी दया अब भी है। तस्मै वन्दे जगद्गुरुम्—इस जगत् के गुरु हैं क्योंकि दाता दयाल जी ने भी उनके सब गुण व लक्षण बताकर यह कहा था कि वह इस संसार में रहते हुए भी इस संसार से परे थे और ऐसे स्थान पर पहुँच चुके थे जो आज जेठ के महीने में कहा गया है कि यहां न ख़ालिक़ है, न ख़लक़त है, न वहां पर कर्त्ता है, न प्रकृति है, न सृष्टि है, न स्रष्टा है ऐसे तत्त्व में पहुंच कर जब इस शरीर में रह रहे थे तो उन्होंने कहा था कि उनका इस शरीर में रहना केवल कर्मभोग के लिए है और यह कहा था :—

आबिदो माबूदियत माबूद से आज़ाद है ।
खुश मुजिस्सिम खुश है दिल का रूह का वह शाद है ।।

इसका अर्थ है कि वह पूजा व मालिक की भक्ति के दर्जे से भी ऊपर उठ गये थे। उनको न किसी की पूजा करने की आवश्यकता थी और न उनको किसी पूजा करने वाले आदर्श की आवश्यकता थी, इस क़ैद व सीमा से वह ऊपर उठ गये थे। तो दाता दयाल ने उनको कहा :—

आबिदो माबूदियत माबूद से आज़ाद है ।
खुश मुजिस्सिम, खुश है दिल का रूह का वह शाद है ।।

इस लिए उनके सगुण रूप को नमस्कार करना ही चाहिए क्योंकि दाता दयाल ने कहा था :—

तेरा सगुण रूप है सन्तमते का सार ।

अर्थात् सन्तमत का जो असली मतलब समझना चाहता है वह उनके सगुण रूप से समझे। उनका शरीर आपने देखा, कितना हल्का-फुल्का था, कितना सुन्दर शरीर था और शरीर भी खुशी का ही रूप था। नारायणदास जी जब उस शरीर की मालिश करते थे तो कितना इनको आनन्द आता होगा। मैं ठीक कहता हूं कि इनके हाथों के अन्तर उस

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

मालिक की किरणें हैं। वह दिल से भी हमेशा खुश रहते थे और उनकी आत्मा में निरन्तर आनन्द रहता था। इस लिए दाता दयाल ने उनके बारे में यह कहा :—

जिस को देखो इस तरह समझो वही सच्चा फ़कीर।
दस्तगीरे दो जहाँ और दो जहाँ का है वह पीर॥

दाता दयाल ने इनके लिए कहा है कि जिसमें ऐसे लक्षण देखो वह सच्चा फ़कीर है जो इस लोक का और वहाँ का अर्थात् दोनों जहानों का नेता व मालिक है। इस लिए इसी भाव को सामने रख के मैंने यह वन्दना की है।

जेठ महीने की वाणी आपने सुनी। असली शब्द ज्येष्ठ है। ज्येष्ठ कहते हैं बड़े को। इस महीने में दिन भी बड़े होते हैं तथा महीना भी बड़ा माना जाता है। ज्येष्ठ को संस्कृत में गुरु भी कहा जाता है। गुरु का अर्थ भी बड़ा होता है। तो यह गुरु की महिमा है। वाणी में कहा गया है कि जीवन हृदय तपन करारी, यह तपन भी जेठ के महीने में ही होती है। तपन से भावार्थ है कि हमारे दिल में लगातार यह लगन व कसक हो कि हम उस मालिक, परम तत्त्व

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

या परम आधार को मिलें जहाँ से कि हम आये हैं। जब तक लगन नहीं होती तब तक मनुष्य बहिर्मुख से अन्तर्मुख नहीं होता। दुःख क्यों है ? दुःख इस लिए है कि अधिकतर लोग बहिर्मुख हैं तथा वे अपने आप को शरीर मानते हैं। शरीर बाहरी वस्तु है तथा जब तक शरीर है शरीर में दुःख भी रहेगा, सुख भी रहेगा।

परमाधार, जहां से हम आये हैं वहां पर पहुँचने पर ही यह अनुभव होगा कि वहां पर किसी प्रकार का दुःख नहीं है, सुख नहीं है। जहाँ सुख है वहां दुःख है, कभी सुख होगा फिर दुःख होगा। परमतत्त्व में न सुख है न दुःख है, साँच नहीं है झूठ नहीं है। वह परमतत्त्व साफ सामने दिखाई नहीं देता क्योंकि वह अन्तस् में छुपा हुआ है, वह ब्रह्माण्ड के भी अन्तर है और कई ब्रह्माण्डों से परे सत्तलोक से भी परे है। वह जो अन्दर है उसको आप नहीं देख सकते जब तक कि आप अन्तर्मुख न हो जाओ। इसीलिए सुमिरन, ध्यान बताया जाता है। बहिर्मुख होने के लिए पहले गुरुमुख होना ज़रूरी है। आप एक दम अन्तर नहीं जा सकते क्योंकि बचपन से जिस घर में आप पैदा

हुए उससे आप के मन व दिमाग़ के ऊपर देवी के, देवताओं के, भैरों जी के वह सब बाहरी प्रभाव पड़े हुए हैं, आपका तो बहिर्मुखी मन है। परमदयाल जी महाराज कहा करते थे कि Suggestions & Impressions दिमाग़ में भरे पड़े हुए हैं और साँसारिक आशाएँ मन में हैं। क्या आप देखते नहीं, लोग तो सांसारिक इच्छाओं व आशाओं को पूरा करने के लिए कैसे अपने-अपने देवताओं की मिन्नतें मानते व चढ़ावे चढ़ाते हैं। मांगो। आपका मांगने का अधिकार है क्योंकि आप मालिक के पुत्र हैं। पुत्र तथा पुत्रियों का मालिक से माँगने का अधिकार है। मांगो, मांगना पाप नहीं है परन्तु उसके बाद समझो कि यह मांग कैसे पूरी हुई तथा किसने पूरी की ? जब मैं बहिर्मुख था मैं भी माँगा करता था और हमेशा इच्छा पूरी हो जाती थी, जैसे परीक्षा में फर्स्ट आ जाऊं 5 पैसे का प्रसाद चढ़ाऊंगा। मैं ब्राह्मण वंश में मुलतान में पैदा हुआ। नहाने के कमरे के ऊपर अलग पूजा का कमरा था जहाँ 200 वर्ष पुरानी शंकर भगवान् की मूर्ति थी। वहां बैठकर जैसे Suggestions & Impressions सब के होते हैं,

अन्तर्मुख सुमिरन, ध्यान, भजन भी किया करता था। मुलतान में चौक बाज़ार में हनुमान जी का एक मन्दिर था जहाँ बहुत लोग जाते थे। जब भी मैं उधर से गुज़रता था तो हनुमान जी को नमस्कार करता था तथा जो चाहता था वह मिल जाता था। मुझे उस समय, बारह-तेरह वर्ष की आयु में भी यह ज्ञान था व सोचता था कि यह मांग पूरी क्यों होती है ? मेरा यह विचार था कि क्योंकि मालिक अपने अन्तर है। अपने आप पर लोगों का विश्वास नहीं होता, समझते हैं कि मैं तो एक मनुष्य पैदा हुआ हूं और नहीं जानता कि मनुष्य तू अपने आप में पूर्ण है, इस लिए उसको कोई बाहर का सहारा ढूढ़ना पड़ता है। Suggestions and Impressions सब के होते हैं। जब मैं चौथी कक्षा में पढ़ता था तो वज़ीफ़े का इम्तिहान देना था, मैंने सोचा कि हनुमान जी ! मैं पाँच पैसे का (बाद में तो पाँच रुपये का और 500/- रु. का भी माना कभी) प्रसाद चढ़ाऊंगा, मुझे वज़ीफ़ा मिल जाये, वज़ीफ़ा मिल गया तो उसमें क्या होता था ? यह विश्वास होता था कि हनुमान जी यह काम करायेंगे, मेरा अपना जो

विश्वास था वह उस मूर्ति से टकरा कर फिर मेरे में आ गया और मुझे विश्वास हो गया, मैं वज़ीफ़े की परीक्षा देने गया, अपने विश्वास के कारण मिल गया परन्तु वह विश्वास उधर से टकराकर फिर इधर वापिस आया, बहिर्मुखी से फिर मैं अन्तर्मुखी भी हो गया।

सनातन धर्म और सन्तमत की शिक्षा एक ही है। गायत्री मन्त्र का अर्थ भी अपने अन्तर ज्योति को देखना है। ये दोनों ही अन्तर्मुख होने व अन्तर जाने की शिक्षा देते हैं क्योंकि जो कुछ मिलता है अपने अन्तर से ही मिलता है, चाहे आप अपनी इच्छा की भी पूर्ति करना चाहते हैं तब भी आप अन्तर्मुख हो कर अपने मस्तक में मालिक की तसवीर बनाकर ध्यान लगाइये, आपको मिलेगा। परन्तु क्योंकि बहिर्मुख होने की आदत पड़ी हुई है इस लिए बहिर्मुखी से अन्तर्मुखी होने में कठिनाई होती है। इसीलिए सच्चा गुरु नाम तभी देता है जब वह देख लेता है कि यह शीघ्र अन्तर्मुखी हो सकता है अन्यथा स्वभाव के अनुसार कर्मयोग या भक्तियोग का रास्ता

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

बताता है। कर्मयोग का मार्ग उसे बताया जाता है जिसमें काम करने या सेवा करने की बहुत शक्ति है जैसे महाराज जी ने नारायणदास जी को कहा कि आ तू मेरी सेवा कर दे। उसी सेवा से मुझे पूर्ण विश्वास है कि नारायणदास जी ने भले ही बहुत लम्बा अभ्यास न किया हो परन्तु इन्होंने मालिक की जो सेवा की है इनको ज्ञान हो गया और उससे यह तर जायेंगे।

जब तक जीवन है कर्म के बिना कोई रह ही नहीं सकता। कोई कहे कि मैं तो सत्तगुरु हो गया और मैं कर्म से ऊपर उठ गया, यह कैसे सम्भव हो सकता है। शरीर तुम्हारा कर्म कर रहा है, खाना खाते हो, भोजन का पाचन हो रहा है और आपके अन्तर खून का दौरा हो रहा है, कर्म तो प्रत्येक व्यक्ति से स्वाभाविक ही हो रहा है। कर्म तो तभी समाप्त करोगे जब मर जाओगे। सन्तमत में गेरुए कपड़े पहनने की आवश्यकता नहीं, यह कभी भी संसार से भागने व कुटिया बनाकर बैठ जाने को नहीं कहता, वो भागने व डरने वाला मार्ग ही ग़लत है।

सन्तमत में गुरु आपको अभयदान देता है और संसार में रहते हुए केवल अन्तर्मुख होने को कहता है और आपको आपके वहमों, भ्रमों व अज्ञान से आज़ाद कर देता है गुरु।

मैं पचास वर्ष से ज्यादा समय से अन्तर्मुख होता रहा हूं परन्तु मालिकेकुल परमदयाल जी के दर्शन करने के बाद बहुत ही ज्यादा अन्तर्मुखी हो गया हूं। मैं चाहूँ तो मालिक की दया है, लाख दो लाख लगा कर गंगा के किनारे कुटिया बनाकर बैठ जाऊँ और वहीं अन्तर्मुख होता रहूं और अपनी साधना करता रहूं। मुझे यहां आकर यह काम करने की क्या आवश्यकता है लेकिन यदि मैं ऐसा करूं तो मैं महामूर्ख हूंगा। महाराज जी सन् 1976 में अमेरिका में एक जगह सत्संग देने जा रहे थे। परसराम जी साथ थे। मैंने मार्ग में परसराम जी को कहा, परसराम जी! यह बड़ा भारी काम महाराज दे रहे हैं मैं यह न कर सकूंगा, महाराज जी को कह दो। कहने लगे कि आप कह दो। मैंने कहा आप कह दें। परसराम जी ने परमदयाल जी को कह दिया।

सत्संग में कितने हज़ार अमेरिकन थे, सत्संग उनको देना था तो पहले ही महाराज जी ने यह कहना शुरू किया, I. C. Sharma ! मैं तुम्हें कह रहा हूं, तुम्हें यह काम अवश्य करना पड़ेगा, मेरी आज्ञा है। यदि मेरी आज्ञा का पालन नहीं करोगे तो मैं तुम्हें Curse करूंगा अर्थात् शाप दूंगा, ऐसे कहा। इस लिए उनकी आज्ञा का पालन करने व यह सत्संग देने का कर्म करने के लिए मैं विवश हूं। मुझ में यदि कोई अच्छाई दिखाई देती है तो उनकी है और यदि आपको कोई बुराई मिलती है तो मेरी है, मेरे मालिक को दोष नहीं दे देना।

बुद्ध धर्म भारत में क्यों नहीं टिका ? क्योंकि बुद्ध धर्म में था 'धर्मं शरणं गच्छामि' मैं धर्म को शरण जाता हूं, 'बुद्धं शरणं गच्छामि' और 'संघं शरणं गच्छामि' अर्थात् मैं संन्यासी बनता हूं। जब सभी लोग संन्यासी, भिक्षु, भिक्षुणी, बनने लगे तो मालिक को ध्यान आया कि यह तो भारत का सत्यानाश हो जायेगा। इस लिए शंकराचार्य जी का अवतार हुआ ताकि बौद्ध धर्म को भारत से हटा दिया जाय और

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL



सबको मालिक की ओर लगाया जाय। बार-बार मालिक स्वयं आता है। स्वयं अपनी शक्ति को शिक्षा बदल देने के लिए भेजता है। स्वामी जी महाराज व हजूर राय सालिग राम जी सच्चाई देने के लिए आये। इन्होंने किताबें लिखीं जो सूत्र रूप हैं और बहुत थोड़े में ही लिखी हैं, सबको समझ में नहीं आ सकतीं इस लिए मालिक ने दाता दयाल जी को भेजा, इन्होंने दुनिया भर के धर्मों पर और सुन्दर विचारों पर चार-पाँच हज़ार किताबें लिख कर हमें दीं। क्योंकि कोई सभी किताबें तो पढ़ ही नहीं सकता था तो परमदयाल जी परमतत्त्व स्वयं शरीर में आये यह दिखाने के लिए कि राधास्वामी मत व सन्तमत यह है और इन्होंने यह बहुत सरल रूप से दिखाया। यह दिखाने के बाद वर्जीनिया (अमेरिका) में मुझे कहने लगे—"मैंने तुमको इस लिए चुना है कि मेरा अनुभव यह कहता है कि अनादि सनातनधर्म और राधास्वामी मत या सन्तमत में कोई अन्तर नहीं है, यह सत्यता का धर्म विश्व में फैलेगा व सब धर्मों को अपना मार्ग दिखायेगा

और तू क्योंकि वेदों व सनातनधर्म का ज्ञाता और अभ्यासी है इन सबको एक करने का महान् काम तू करेगा और यह काम करते हुए निश्चय ही तू मेरी तरह इस अन्तिम अवस्था में गुम होगा जो यह जेठ महीने की बाणी कहती है, जहां न मैं है न तू है और जिसको कबीर साहिब ने कहा है :—

माला फेरूं न हरि भजूं मुख से कहूं न राम।
मेरा राम मुझको भजे तब पाऊं विश्राम॥

भावार्थ यह है कि सन्तमत में बहिर्मुखी से पहले गुरुमुख होना पड़ता है। जब गुरु की ओर ध्यान होगा तो गुरु को ओर देखते रहने से उसकी वृत्ति जम जायगी तभी अन्तर्मुखी हो सकोगे। सन्तमत के ये दर्जे हैं जिन पर चलना होता है।

अब आप दाता दयाल जी महाराज के शब्द पर विचार कीजिये :—

हमें भी दे तार लाखों तारे, दयाल दाता कृपाल स्वामी।

गुरु क्या है? दयाल दाता है। यहीं पर शिष्य भी देती है तो गुरु भी देता है। गुरु यदि दें नहीं तो वह आगे परमधाम को नहीं पहुँच सकता। कोई कहे

मैं सत्संग नहीं कराता, ज्ञान नहीं देता, वह गुरु नहीं है। उसको दयाल होना पड़ता है। गुरु के अन्तर से प्रेम तथा दया की किरणें स्वाभाविक ही निकलती रहती हैं इस लिए गुरु को दाता दयाल कहा गया है। सन्त को प्रेम का भण्डार क्यों कहा जाता है? क्योंकि सन्त का तो यह स्वभाव ही है वह दया व प्रेम तो करेगा ही। सन्त की कोई यह मेहरबानी नहीं है कि वह आप को देखकर दया कर रहा है। यदि वह सन्त है तो दया स्वयं ही निकसेगी जैसे सूर्य से प्रकाश व चमक आ रही है, सूर्य विवश है। इस लिए यहां गुरु को कहा गया है कि हे दाता दयाल! तूने लाखों तारे हैं तू मुझे भी तार। इसी भावना से जो सत्संग में आता है, वह तर जाता है, यहां तक कि गुरु अधूरा भी हो तो भी शिष्य तर जायगा परन्तु यदि गुरु की कथनी व करनी में अन्तर नहीं है तो वह गुरु अधूरा नहीं है:—

लगा दे भव जल के अब किनारे, दयाल दाता कृपाल स्वामी।

भव क्या है? भव का अर्थ है होना। जब सुरत ऊपर से आती है तो पहले वह अपने आप को एक

दिव्य प्रकाश में लपेट लेती है और उस दिव्य जगत् से नीचे उतर कर फिर उसमें एक आनन्द आता है, आनन्दमय कोश, विज्ञानमय कोश और फिर मनोमय कोश ऐसे बहुत से कोश हैं जिनमें वह लिपटी हुई नीचे आती है। जब नीचे शरीर में आ गई तो वह यह समझ लेती व मान लेती है कि मैं शरीर हूं या मैं मन ही हूं, यह भव है अर्थात् भव में आ गई क्योंकि वह अपने निजघर को भूल गई जो अजर, अमर व अविनाशी है। उस भवसागर से पार करने के लिए गुरु से कहा गया है कि ऐसी दया करो व ऐसा ज्ञान दो कि मैं इन सीमाओं से छूट जाऊं। इसके लिए ही सत्संग में गुरु ज्ञान देता है :—

न हो किसी से हमारा नाता, न हम किसी का सहारा ढूंढें।

वैसे तो जग में रहना है तो नाता-रिश्ता तो होगा व रहेगा ही, किसी के पुत्र-पुत्री, किसी के माता पिता, किसी के भाई इत्यादि होंगे परन्तु असल चीज परमतत्त्व सब में है। यदि आप सब में उसी परमतत्त्व को समझ लें और उसी असली व पवित्र नाते व सम्बन्ध का ध्यान रहे तब ये नाते आपके लिए

बिलकुल रुकावट नहीं बनेंगे बल्कि यही आपका मालिक का सुमिरन व मालिक की सच्ची याद हो जायेगी और ये नाते न समझ कर उसी परमतत्त्व का ही नाता समझें तो बहुत आनन्द रहेगा :—

रहें सदा तेरे ही सहारे, दयाल दाता कृपाल स्वामी।

इस तरह जब आपको उसी का सहारा होगा और आप उसी असली आधार के शरणागत हो जायेंगे व उसी मालिक में पूर्ण विश्वास रखेंगे तो आपके सब काम भली प्रकार होंगे। दाता दयाल इस शब्द में यही प्रार्थना करते हैं कि हे स्वामी, हे परमतत्त्व, सर्वाधार व हे परमगुरु ! मैं चाहता हूं कि और किसी का सहारा न लेकर तेरा ही सहारा लूं क्योंकि असली सहारा वही है। वेदान्तियों की यह बड़ी भूल है जो यह कहते हैं कि यह दुनिया एक भ्रम, माया या स्वप्न है या वे 'अहं ब्रह्म अस्मि', कहते हैं। उनको समझना चाहिए कि आधार सब का वही परमतत्त्व है जिस पर कि सब कुछ रखा हुआ है :—

न मोह माया का मन में खटका,
न काल और कर्म का हो झटका।

जब हमारी तार परमाधार के साथ बंध गई तो यह मोहमाया सब अपने आप ही हट जायेगी। मोहमाया से हटने का अर्थ यह नहीं कि आपका प्यार नहीं होगा, प्यार तो सुरत से निकलता है व आत्मा का होता है। प्यार मन व बुद्धि से नहीं निकलता, जितना अधिक बुद्धि वाला होगा उतना वह कटु हृदय व कड़े व्यवहार वाला होगा, उसका प्यार नहीं होता। हां, जो स्वच्छ बुद्धि वाला अर्थात् प्रज्ञा वाला होता है उसका प्यार होता है और वही स्वच्छ प्यार सन्त व फकीर का होता है क्योंकि उसका मन मालिक के साथ लगे होने के कारण उसकी मोहमाया जा चुकी होती है। मोहमाया चले जाने का अर्थ क्या है? कि आप का लगाव नहीं होगा। महाराज जी कहा करते थे, करो प्यार परन्तु उसमें फँसो नहीं अर्थात् अपने स्वार्थ के लिए प्यार नहीं करो। प्यार के बिना तो काम चल ही नहीं सकता परन्तु प्यार आपका स्वच्छ हो। प्यार क्या

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL



है ? प्यार एक करने वाला है, घृणा अलग करने वाली है। आप अपने भोजन को ही देखिये। मान लो आप कहते हैं कि मुझे आलू-मटर प्यारे लगते हैं तथा भिण्डी अच्छी नहीं लगती, तो आप भिण्डी को त्यागोगे और आलू-मटर खाओगे। खाओगे क्यों ? ताकि वो मेरे अन्तर एक हो जाये। इस लिए प्रेम में त्याग और एकत्व दोनों गुण रहते हैं। तो प्यार एक करता है, वह बिना कहे व बोले ही एकदम हो जाता है। प्यार आत्मा का है तथा सुरत से निकलता है। सुरत क्योंकि अनन्त है इस लिए प्यार एक जगह नहीं ठहर सकता जैसे मैं अपनी पत्नी से प्यार करूं और अमुक से नहीं करूं, वह तो बहता है। ~~वह स्वच्छ~~ नीर, बड़ा निर्मल प्यार का जो पानी है वह ऊपर पहाड़ से गंगा की तरह बहता है। बहते हुए आगे आकर एक बड़ी जगह पर ठहर जाता है, एक तालाब बना लेता है, फिर आगे जाता है और और तालाब बनाता है। इस तरह अपना दायरा बढ़ाता ही जाता है। वह प्यार ही क्या हुआ जो एक ही जगह पर टिक जाय, वह मोह होता है। सन्त का प्यार ऐसा ही स्वच्छ प्यार होता है। लोग समझते नहीं हैं कि

सन्त का प्यार क्या है और दूसरा आदमी कैसे प्यार करता है या सन्त के किसी चीज़ को हाथ लगाने का क्या प्रभाव होता है। एक फ़कीर था वह छोटे सुन्दर बच्चों को लेकर गोद में बैठा लेता था। लोग निन्दा करते थे कि यह क्या करता है। एक दिन जा रहे थे कि काला साँप था उस को उठा कर गोद में रख लिया, तब लोग समझे कि यह बात है। मैं आपको मोह और प्यार का अन्तर बता रहा हूं। वह जो स्वच्छ प्यार होता है वह मोह नहीं होता, मोह से छुटकारा पाओ परन्तु प्यार व प्रेम से नहीं :—

निवास कर मन में अब हमारे, दयाल दाता कृपाल स्वामी।

जब वह हमारे मन में निवास करेगा, निरन्तर सुमिरन ध्यान से उसी को ही भजते रहेंगे तो वह तो अनन्त है उससे जो हमारा काम होगा वह अनन्त प्रेम का होगा। मुझे अपने आप पर पूरा विश्वास है कि मेरे दिल में आप लोगों के लिए हमेशा अगाध प्रेम है व रहेगा।

दे प्रेम भक्ति का दान हमको, न दे तू सन्मान मान हमको।

दाता दयाल कहते हैं कि हमको प्रेम भक्ति का

दान दो। मालिक ने मुझ पर बड़ी दया की है कि मुझे तो यह दान उसने भरपूर दिया है, मान सम्मान की कोई जरूरत नहीं, मुझे वह चाहिए नहीं। मान सम्मान मुझे बहुत मिल चुका, देश-विदेश में जिस यूनिवर्सिटी में भी जाओ मेरी किताबें पढ़ाई जा रही हैं। भक्ति रत्न के सामने मान सम्मान की तुलना ही क्या है। मैं पढ़ाना चाहता तो अमेरिका में अभी 9 वर्ष और पढ़ा सकता था जहाँ 9 महीने पढ़ाने का मुझे लगभग 5 लाख रु: मिलता है परन्तु जब आप सत्संगियों के रूप में मैंने मालिक का प्रेम इतना उमड़ता देखा तो मैंने उस पढ़ाने के काम को तिलांजलि दे दी तथा आप लोगों की सेवा के लिए उपस्थित हो गया। आप लोगों के प्यार की तो कोई क़ीमत ही नहीं :—

दे खोल दृष्टि तुझे पिछानें, दरस परस करके तुझको मानें।

जब वह दृष्टि खुल गई कि मालिक सब में है तो इस पवित्र दरस, परस से हमें यह ज्ञान होगा कि सब जगह मालिक है :—

उदय हों घट सर चन्द्र तारे, दयाल दाता कृपाल स्वामी।

यह बिलकुल सच है कि जो सूर्य, चन्द्र, तारे ब्रह्माण्ड में हैं वही हमारे अन्दर भी हैं। इस पर किसी और दिन सत्संग दूंगा। गुरु की दया दृष्टि हो जायगी तो अनुभव और साधना से आप में वह सूर्य, चांद सब अपने आप दिखाई देने लग जायेंगे :—

अलख अगम का दिखा तमाशा, दिलादे निज धाम में तू बासा।

सूर्य चाँद सितारे के बाद फिर सत्तलोक के दर्शन व सत्तपुरुष से परे अलख और अगम का तमाशा देखें। इससे आगे अपना निवास ठिकाना है जहां पहुँचाने के लिए प्रार्थना की गई है :—

चरण कमल के रहे सहारे, दयाल दाता कृपाल स्वामी।

गुरु के चरण कमल प्रकाश, अनुभव और विवेक हैं।

जपूं सदा मन से राधास्वामी, कहूँ सदा मुख से राधास्वामी।
दिला दिला नाम धन दुलारे, दयाल दाता कृपाल स्वामी ॥

दाता दयाल गुरु से प्रार्थना करते हैं कि चरण कमल का सहारा रहे और नाम धन की प्राप्ति हो, जिससे कि ये सब अवस्थाएँ प्राप्त हों और विदेह मुक्ति मिले।

राधास्वामी नाम पर फिर किसी दिन सत्संग दूंगा।

---

# मासिक सन्देश

गुणातीत, गुण, सगुण स्वरूपम अविनाशी राधास्वामी।
निराकार साकार अनुपम सुखराशी राधास्वामी ।।

मेरे प्यारे सत्संगियो !

राधास्वामी। परम दयाल जी सहाई।

पिछले महीने के सन्देश में मैंने आपको यह बताने को कोशिश की थी कि गुरु शब्द का क्या अर्थ है और राधास्वामी मत में खासकर गुरु की क्या महिमा है। यहाँ पर मैं यह बताना चाहता हूं कि राधास्वामी मत जो सन्तमत का सबसे सच्चा नमूना है गुरु को सिर्फ मनुष्य नहीं मानता बल्कि परमतत्त्व मानता है। यह बात कबीर साहिब ने भी लिखी है। परमदयाल जी महाराज ने बार-बार यह समझाने की कोशिश की है कि असली गुरु हर एक सत्संगी के अन्दर है। बाहर का गुरु वह ज्ञान और विवेक देता है जिसके द्वारा सत्संगी को उस अवस्था या

नाम का पता लग जाता है जिसे परमधाम कहते हैं। राधास्वामी मत में गुरु, नाम और सत्संग तीनों की महिमा है। आज मैं नाम की महिमा पर आप से कुछ बातचीत करना चाहता हूं। राधास्वामी नाम को समझ लेने से न ही सिर्फ परमधाम के रूप के बारे में और गुरु के बारे में सच्चा ज्ञान हो सकता है बल्कि उस ग़लतफ़हमी को भी दूर किया जा सकता है कि राधास्वामी किसी ऐसे व्यक्ति का नाम है जिसने यह मत चलाया था।

राधास्वामी नाम में राधा का अर्थ सुरत है और स्वामी का अर्थ शब्द है। राधा शिष्य है, स्वामी गुरु है। जब सुरत, शब्द में मिल जाती है तो वे दोनों मिल कर वही परमतत्त्व हो जाते हैं जिसका कोई नाम नहीं। जब तक सुरत शब्द से अलग है तब तक उसकी खोज ज़ारी रहती है। जब सुरत परम शब्द में मिल जाती है तो उसकी वह हालत हो जाती है जिसको ब्यान नहीं किया जा सकता। परमदयाल जी का सारा जीवन उस तलाश में गुज़रा जिसकी आखिरी मंज़िल राधास्वामी धाम है। उन्होंने कई

बार कहा है कि जब साधक मंज़िले मक़सूद पर पहुँच जाता है तो उसकी सारी जुस्तजू खत्म हो जाती है तथा उसे जीवन में भी शान्ति मिल जाती है। वह उसको ब्यान क्यों नहीं कर सकता ? इसका जबाव इतना है कि ब्यान करना भी, भाषा का बोलना भी एक हलचल है। जब तक मनुष्य में दोपने का भाव है वह परमतत्त्व से अलग रहता है। जब वह परम-तत्त्व से एक हो जाता है तो उसका दोपना ख़त्म हो जाता है। दाता दयाल जी ने इसी बात को नीचे दिये गये दोहे में सीधे तरीके से ब्यान किया है:—

बूंद पानी में मिला दरिया बना क्या ज़ुस्तजू,
ज़ात में जब मिल गया तो फिर करे क्यों गुफ़्तगू।

इसी तरह से सत्संग में बैठ कर गुरु से ज्ञान लेने के लिए सबसे पहले गुरु के विचारों को ग़ौर से सुनना चाहिए। गुरु अपने अनुभव के आधार पर उसको समझायेगा कि नाम क्या है और नाम के सुमिरन करने से उस धाम पर कैसे पहुँचा जा सकता है जो हमारा निजधाम है, जहाँ से हम आये हैं और जहाँ हमको जाना है। क्योंकि गुरु का काम सभी शंकाओं को दूर करना होता है। इस लिए सत्संग

की दूसरी सीढ़ी मनन अर्थात् सवाल जवाब करना है। सवाल करना शिष्य का काम है यानि कि राधा का काम है और जवाब देना गुरु का काम है यानि स्वामी का काम है। इस लिए जब तक सवाल जवाब चलता रहता है गुरु और शिष्य का दोपना मौजूद रहता है लेकिन जैसे कि ऊपर कहा गया है सुरत और शब्द का एक हो जाना ही राधास्वामी अवस्था का राज है। इस लिए सत्संग में तीसरी सीढ़ी निदिध्यासन है जिसका मतलब सुमिरन ध्यान के जरिया उस सच्चाई को अपना लेना और अपने आप में ही राधास्वामी अवस्था पर पहुँच जाना है। सत्संग में भी जब सभी शंकाएँ दूर हो जाती हैं शिष्य के सभी प्रश्नों का जवाब मिलने पर, पूरा ज्ञान हो जाता है उस समय गुरु और शिष्य एक हो जाते हैं। दूसरे शब्दों में 'राधा' और 'स्वामी' मिलकर राधास्वामी हो जाते हैं।

मैंने इस सन्देश में राधास्वामी शब्द की थोड़ी सी व्याख्या इस लिए दी है कि सत्संगियों को और दूसरे धर्म वालों को यह ज्ञान हो जाय कि राधास्वामी

किसी मनुष्य का नाम नहीं है बल्कि उस अविनाशी, गुणातीत और सगुण, निराकार और साकार, आनन्द और सुख की राशि परमतत्त्व, मालिकेकुल, सर्वाधार का नाम है जिसकी खोज में सभी धर्मों पर चलने वाले लगे हुए हैं। राधास्वामी नाम का सुमिरन किया जाता है और वही सुमिरन राधास्वामी धाम पर पहूँचा देता है। वहाँ पहूँच कर हर किस्म का दोपना समाप्त हो जाता है।

इन्हीं विचारों के साथ मैं आप सब को अपनी शुभकामनाएँ भेजता हूं और यह आशा करता हूं कि आप सच्चे सत्संगी बन कर और दोपने से ऊपर उठकर अपने घर में, समाज में और देश में सब को राधास्वामी का स्वरूप मानते हुए सच्चाई और प्रेम पर चल कर अपने जीवन को सुखी बनायेंगे तथा समाज, देश और विश्व का भी भला करेंगे। यही मानवता धर्म है जो सच्चा सन्तमत भी है और सनातन धर्म भी है। सब को मेरा राधास्वामी।

सदा आपका फ़कीरमय

मानव

## परम सन्त मानव दयाल जी महाराज

## का

# टूर प्रोग्राम

| | | | |
|---|---|---|---|
| 14 जुलाई 1982 | | | प्रात: होशियारपुर से रवानगी उज्जैन के लिए |
| 15-17 | ,, | ,, | उज्जैन |
| 18 | ,, | ,, | दोपहर रवानगी इन्दौर के लिए |
| 18-20 | ,, | ,, | इन्दौर |
| 20 | ,, | ,, | सायं रवानगी भोपाल के लिए |
| 21 | ,, | ,, | रात्रि रवानगी दिल्ली के लिए |
| 22 | ,, | ,, | दिल्ली में निवास—C/o (मार्फत) श्रीमती लक्ष्मी भूटानी आर. 680, न्यू राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली, टैलीफोन नं. 584557 |

23 जुलाई 82 दिल्ली, मार्फत के. पी. वर्मा, 17/33, राजपुर रोड, टैलीफोन नं. 231552

24 ,, ,, प्रातः मोदी नगर

25 ,, ,, को सलवान स्कूल राजेन्द्र नगर दिल्ली में सुवह 8-30 से 10 वजें तक हजूर मानव दयाल जी महाराज का सत्संग होगा। इसी दिन, रात्रि रवानगी होशियारपुर के लिए।

नोटः—1. दिल्ली के प्रोग्राम के बारे में सूचना टैलीफोन नं. 582557 पर भी प्राप्त की जा सकती है।

2. महाराज जी के साथ अमेरिकन आचार्य डॉ. विलियम रोडन हाईज़र और 5 अमेरिकन सत्संगी भी होंगे।

3. दशहरे और वसन्त का प्रोग्राम हजूर परम दयाल जी महाराज के टूर के अनुसार ही होगा।

सैक्रेटरी

—o-⁔-o—

# मानव दयाल बनाया तुमने

लेखक :—दरवेश

दिल से नफ़रत की स्याही को मिटाया तुमने,
गीत उल्फ़त का परमदयाल सुनाया तुमने ।
जग से अज्ञान अंधेरे को हटाया तुमने,
ज्ञान के दीप से प्रकाश दिखाया तुमने ।
भूले भटकों को सही राह दिखाया तुमने,
ख़्वाबे ग़फ़लत से ज़माने को जगाया तुमने ।
गाँव भंजाल हिमाचल के जिला ऊना में,
आके मस्तराम के आँगन को सजाया तुमने ।
दयाल दाता के किया नाम को रोशन जग में,
उस की तालीम को दुनिया में फैलाया तुमने ।
मुल्क अमरीका में जा ढूंढ़े आई. सी. शर्मा,
जानशीन अपना उन्हें आप बनाया तुमने ।
मेहरो मानवता के भरपूर खजाने दे कर,
एक मानव से मानव दयाल बनाया तुमने ।
सर पै दरवेश के जब हाथ दया का रखा,
एक गुणहीन को गुणवान् बनाया तुमने ।

# वन्दनम्

चरण शरण की बन्दना, नित कोइ और न काम।
गुरु वसो चित आये मेरे, बख्श दो निज नाम ॥

तेरी शरणागत हुआ फिर, किसकी राखूं आस।
आस तो तेरी दया की, जग से रहूं उदास ॥

रूप ध्याऊं, नाम गाऊं, शब्द राता मन।
आठों याम तेरा ही सुमिरन, भाग मेरा धन ॥

सीस पर निज कर कमल धर, लिया चरण लगाय।
पतित पापी तर गया, गुरु शरण तेरी आय ॥

मुक्ति की नहीं चाह मन में, भक्ति प्यारी लाग।
राधास्वामी की दया से, भाग पूरन जाग ॥

---

**मानवता मन्दिर में अगला मासिक सत्संग**
**18-7-82 को होगा।**

---

Regd. No. 2626574
MANAV MANDIR

JULY 10th 1982
NWHSP—7

ADDRESS

To

1283 Sh. A. Hanmanth Rao
H. No. 10-3-194/8
Humayun Nagar
Hyderabad 500028 A.P.

From :

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR.

Phone : 2022

Shiv Dev Rao Press, Manavta Mandir, Hoshiarpur (Pb.